दैनिक भास्कर

Date:11-05-23

बाजरे का रकबा बढ़ा, अब सरकार की बारी

संपादकीय

प्रधानमंत्री के आह्वान पर यूएन ने वर्ष 2023 को 'अंतरराष्ट्रीय बाजरा वर्ष' घोषित किया है। बाजरा वर्ग में बाजरा, रागी, कोदो, ज्वार और सांवां आदि मोटे अनाज आते हैं। अगर दुनिया इस अनाज का प्रयोग करे तो भारत के किसानों को बड़ा निर्यात लाभ मिल सकता है। लेकिन गेहूं में मौजूद ग्लूटेन प्रोटीन आटे को मुलायम और लचीला रखता है। लिहाजा ब्रेड उद्योग इसे हर हाल में खड़ा रखना चाहेगा। गेहूं के मुकाबले बाजरे का उत्पादन प्रति-हेक्टेयर फिलहाल एक-तिहाई है। इसीलिए पिछले 20 वर्षों में इसका उत्पादन 21.32 मिलियन टन से 15.92 मिलियन टन रह गया है। फिर भी किसानों ने इस बार चावल की जगह बाजरे का रकबा करीब आठ लाख हेक्टेयर बढ़ा दिया है। अगर किसान उत्साह दिखा रहा है तो क्या सरकार का दायित्व नहीं है कि बाजरे की एमएसपी दरें घोषित करे और खरीद की गारंटी ले ? सरकार बाजरे को पीडीएस के जरिए बांटना अनिवार्य कर सकती है। बाजरे की नई हाइब्रिड नस्ल पूसा-1201 का उत्पादन दूना यानी करीब 28 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। क्या जरूरी नहीं सरकार ऐसे शोधों को आम किसानों तक पहुंचाने के लिए व्यापक अभियान शुरू करे ? अच्छे शोधों को वाणिज्यिक प्रयोग तक पहुंचाने में वर्षों लग जाते हैं। इस रवैए को भी बदलना होगा।

Date:11-05-23

आरक्षण की लड़ाई में कैसे झुलस रहा है मणिपुर

विराग गुप्ता, (लेखक और वकील)

'मेरा राज्य जल रहा है!' बॉक्सर मैरी कॉम की इस पोस्ट के बाद देश का ध्यान मणिपुर की हिंसा की तरफ गया। मणिपुर के अलावा कर्नाटक और बिहार की हालिया घटनाओं से साफ है कि आरक्षण की सियासत से सभी दलों के नेता बांटो और राज करो मंत्र का सफल इस्तेमाल कर रहे हैं। लेकिन आरक्षण के सियासी दंगल में अदालती फैसलों से उलझनों का बढ़ना कानून के शासन के लिहाज से खतरनाक है। कर्नाटक में मुस्लिम आरक्षण और मणिपुर में जनजातीय आरक्षण की गेंद सुप्रीम कोर्ट के पाले में है। जबकि बिहार में जातिगत जनगणना का मुद्दा अभी हाईकोर्ट में अटका है। मणिपुर हाईकोर्ट के आदेश की पड़ताल करने पर अदालत के साथ सरकार की विफल तस्वीर उभरकर सामने आ रही है :

1. संविधान पीठ के फैसले की अनदेखी : हाईकोर्ट में याचिका दायर करने वाले 8 पिटीशनर एक ही संस्था मैतेई ट्रेड यूनियन से जुड़े हैं। इसका रजिस्ट्रेशन पिछले साल नई सरकार के गठन के साथ हुआ था। सरकारों के जवाब के बगैर

राज्य और केंद्र सरकार के वकीलों की सहमति के बाद सिंगल जज बेंच ने मामले के दायर होने के 15 दिन के भीतर ही यह फैसला दे दिया। मणिपुर हाईकोर्ट ने गुवाहाटी हाईकोर्ट के 26 मई 2003 के फैसले को आधार बनाया है, जिसमें 8 जनजातियों को आरक्षण देने के निर्देश दिए गए थे। लेकिन उनमें मैतेई समुदाय शामिल नहीं था।

मणिपुर मामले पर सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस ने मौखिक टिप्पणी करते हुए कहा कि एसटी आरक्षण को नोटिफाई करने का अधिकार राष्ट्रपति को है। महाराष्ट्र मामले में पांच जजों की संविधान पीठ के 2000 के जिस पुराने फैसले की बात हो रही है, उसका पालन मणिपुर और गुवाहाटी दोनों फैसलों में नहीं किया गया। मणिपुर हाईकोर्ट के एक्टिंग चीफ जस्टिस ने गलती को स्वीकार करने के बजाय आलोचना करने वालों के खिलाफ ही कंटेम्प्ट नोटिस जारी करके अभेद्य न्यायिक सुरक्षा कवच धारण कर लिया है।

2. राज्यों और केंद्र में लालफीताशाही से अटके फैसले : हाईकोर्ट के फैसले में 29 मई 2013 के पत्र का विशेष उल्लेख है। उसमे केंद्रीय जनजातीय मंत्रालय ने मैतेई समुदाय को आरक्षण देने के लिए राज्य सरकार से 2 महीने में रिपोर्ट मांगी थी। फैसले के अनुसार पिछले 10 सालों से उस पत्र पर राज्य सरकार ने कोई कार्रवाई नहीं की। याचिकाकर्ताओं ने हाईकोर्ट में पिटीशन फाइल करने से पहले अप्रैल 2022 में केंद्र और राज्य सरकार के 12 अधिकारियों को प्रतिवेदन दिया था। एक महीने के भीतर नौकरशाही ने उस पत्र को फॉरवर्ड करते हुए 2019 और 2021 के पुराने प्रतिवेदनों पर भी राज्य सरकार की सिफारिश मांगी थी। संविधान के अनुच्छेद 342 और 366 के साथ सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ के फैसले से साफ है कि जनजातीय आरक्षण से जुड़े मामलों पर राष्ट्रपति को पूर्ण अधिकार हासिल है। इसलिए उन मामलों में राज्यों के साथ हाईकोर्ट को बेवजह की दखलंदाजी नहीं करनी चाहिए। इसके बावजूद डबल इंजिन वाली केंद्र सरकार ने इस मामले पर ठोस फैसला लेने के बजाय राज्य सरकार के पाले में गेंद ठेल दी। नेताओं ने मामले को हाईकोर्ट के सामने धकेल दिया। हाईकोर्ट के जल्दबाजी के इस आदेश की वजह से बेगुनाह लोगों की मौत के साथ, हजारों लोगों को राहत शिविरों में पनाह लेना पड़ा है।

3. सुप्रीम कोर्ट में जवाबदेही तय हो : हाईकोर्ट के फैसले के बाद हिल काउंसिल ने प्रस्ताव पारित किया है। उसके अनुसार मैतेई समुदाय को ओबीसी और एससी का दर्जा मिलने की वजह से आरक्षण के सारे लाभ हैं। लेकिन हकीकत में पहाड़ी इलाकों में मैतेई लोगों को जमीन नहीं खरीदने की अनुमति मिलना विवाद का बड़ा पहलू है। सरकारी जमीन पर अफीम की गैरकानूनी खेती और विदेशी घुसपैठ भी समस्या को विकराल बना रहे हैं। सत्तारूढ़ दल के एमएलए और उसके बाद पुलिस के मुखिया ने राज्य में अनुच्छेद 355 के इस्तेमाल की बात कही, जिसकी आधिकारिक पुष्टि नहीं हुई।

लेकिन इस हिंसा से साफ है कि मणिपुर सहित पूर्वोत्तर राज्यों में अफप्सा कानून को हटाने की चरणबद्ध मुहिम को झटका लग सकता है। सरकारी लालफीताशाही और जजों के गलत आदेश की वजह से बेगुनाह नागरिकों को हिंसा और पलायन की यंत्रणा से गुजरना पड़ रहा है। कर्नाटक में सोनिया गांधी के भाषण के बाद सार्वभौमिकता पर बड़ी बहस हो रही है।

दैनिक जागरण

Date:11-05-23

अशांति से घिरा पाकिस्तान

संपादकीय

पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान को इस्लामाबाद हाई कोर्ट परिसर से जिस तरह धकियाते हुए गिरफ्तार किया गया और अदालत ने उनकी गिरफ्तारी को वैध करार दिया, उससे यदि कुछ स्पष्ट हुआ तो यही कि सेना और सरकार के साथ न्यायपालिका भी उन्हें सबक सिखाना चाहती है। इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि भ्रष्टाचार के मामले में उनकी गिरफ्तारी पाकिस्तानी रेंजर्स के जवानों ने की, जो सेना के तहत काम करते हैं। इमरान खान की गिरफ्तारी के बाद उनके समर्थकों ने सड़कों पर निकलकर केवल उत्पात ही नहीं मचाया, बल्कि सैन्य ठिकानों को भी निशाना बनाया। उन्होंने न केवल रावलपिंडी में सेना मुख्यालय पर धावा बोला, बल्कि लाहौर में कोर कमांडर के घर को भी तहस-नहस कर दिया। इसके अलावा अन्य शहरों में भी सेना के ठिकानों में घुसकर तोड़फोड़ की गई। सड़कों पर उतरकर हिंसा कर रहे इमरान खान के समर्थक सेना के अफसरों को जिस तरह खुलेआम गालियां भी दे रहे हैं, वह अभूतपूर्व है। पाकिस्तान के इतिहास में ऐसा पहले कभी नहीं हुआ। वहां आज तक किसी भी नेता ने सेना के खिलाफ उस तरह खुल कर खड़े होने की हिम्मत नहीं दिखाई, जैसी इमरान खान ने दिखाई। विडंबना यह है कि इमरान खान उसी सेना के बैरी बन बैठे, जो उन्हें छल-बल से सत्ता में लाई थी। इसमें दो राय नहीं कि इमरान जबसे सत्ता से बाहर हुए हैं, तबसे उनकी लोकप्रियता बढ़ी है, लेकिन वह यह भूल गए कि पाकिस्तान में सेना से बैर लेकर कोई अपनी राजनीति नहीं चला सकता, भले ही कोई कितना भी लोकप्रिय क्यों न हो।

इमरान खान के समर्थक चाहे जितना उत्पात मचाएं, वे सेना की सख्ती का सामना नहीं कर सकते। सेना के रवैये से यह स्पष्ट है कि वह इमरान खान के समर्थकों के उत्पात को सहन करने के लिए तैयार नहीं। चंद दिनों में ही वह इमरान के साथ खड़े लोगों के जोश को ठंडा कर दे तो हैरानी नहीं। सेना केवल इतने तक ही सीमित नहीं रहने वाली। इसके भरे-पूरे आसार हैं कि वह यह भी सुनिश्चित करेगी कि इमरान खान को चुनाव लड़ने के अयोग्य करार दिया जाए। इसकी शुरुआत होती हुई भी दिख रही है। उन्हें एक मामले में दोषी करार दिया गया है। यह ध्यान रहे कि उनके खिलाफ सौ से अधिक मामले दर्ज हैं। उनका वही हश्र हो सकता है, जो बीते समय सेना की लाइन पर न चलने वाले कई प्रधानमंत्रियों का हुआ। इसका एक उदाहरण नवाज शरीफ भी हैं। इमरान खान की गिरफ्तारी के बाद पाकिस्तान में जो कुछ हो रहा है, वह इस देश को बिखराव की ओर ले जाने और उसे आर्थिक एवं राजनीतिक रूप से और अधिक अस्थिर करने वाला साबित हो सकता है। चूंकि अस्थिरता और अशांति से घिरा पाकिस्तान पड़ोस के लिए और बड़ा खतरा बना सकता है, इसलिए भारत को सतर्क रहना होगा।

Date:11-05-23

वैश्विक स्तर पर छाप छोड़ता भारत

इमैनुएल लेनैन, (लेखक भारत में फ्रांस के राजदूत हैं)

विश्व के समक्ष समस्याओं को सुलझाने की दृष्टि से जी-20 एक प्रमुख संगठन के रूप में उभरा है। इसमें दुनिया के सभी महाद्वीपों के देशों का समावेश है, जो वैश्विक आबादी के दो-तिहाई और 80 प्रतिशत से अधिक जीडीपी का प्रतिनिधित्व करते हैं। ऐसे में पृथ्वी को बचाने का बड़ा दारोमदार जी-20 के कंधों पर है। चिंतित करती हुई वैश्विक स्थितियों को देखते हुए हमें अब तत्काल कदम उठाने होंगे। जलवायु परिवर्तन का खतरा हमारे मुंह बाएं खड़ा है। सभी देश दैनिक स्तर पर इसके खतरनाक परिणाम भी भुगत रहे हैं। दक्षिण एशिया में गर्म हवाओं के थपेड़े जैसे मौसमी पहलू भी इसमें शामिल हैं। महासागर प्रदूषण की मार से कराह रहे हैं। जैव-विविधता संकट में है। अंतरराष्ट्रीय तनाव चरम पर है। विशेषकर हिंद-प्रशांत क्षेत्र में टकराव तेज है, जिससे भारत भी बखूबी परिचित है। वैश्विक अर्थव्यवस्था अभी भी महामारी से उत्पन्न गतिरोध से उबर रही है। इन सबसे बढ़कर यूक्रेन पर रूसी हमले ने चुनौतियों को और बढ़ा दिया है। इसने वैश्विक आर्थिक रिकवरी को खतरे में डाल दिया है। इससे खाद्य, ऊर्जा और उर्वरक आदि की कीमतें बहुत ज्यादा बढ़ गई हैं।

इन चुनौतियों से केवल एक अकेला देश नहीं जूझ सकता। इन चुनौतियों का अंतरराष्ट्रीय स्वरूप वैश्विक समाधानों की ही मांग करता है। ऐसे में बेहतर यही होगा कि विश्व उत्तर बनाम दक्षिण या पूरब बनाम पश्चिम के विभाजनों में न फंसकर एकजुट होकर काम करे। हमें अवरोध के बजाय सेतु बनाने होंगे। इसके लिए 'वसुधैव कुटुंबकम्' का भारतीय दर्शन बहुत उपयोगी होगा। कुछ देशों के आक्रामक व्यवहार और अंतरराष्ट्रीय विभाजनों की काट में विश्व को एक परिवार मानकर साझा भविष्य के निर्माण की मंशा ही कारगर उपाय हो सकती है। राष्ट्रपति मैक्रों ने भी इसी प्रकार की अवधारणा को प्रोत्साहन दिया है। अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन की शुरुआत के दौरान प्रधानमंत्री मोदी की उपस्थिति में भी उनके ऐसे ही विचार प्रकट हुए।

इस महत्वपूर्ण पड़ाव पर भारत के हाथों में जी-20 की कमान देखकर फ्रांस बहुत खुश है। यह वर्ष भारत के लिए अवसर लेकर आया है कि वह 'वसुधैव कुटंबकम्' के अपने विचार को साकार करे और पृथ्वी को सुरक्षित एवं हरित बनाने में अपने योगदान को विश्व में मान्यता दिलाए। फ्रांस पहले दिन से ही भारत की अध्यक्षता का समर्थन कर रहा है। कार्यकारी समूहों से लेकर मंत्रिस्तरीय समूहों से जुड़ी बैठकों में फ्रांस की सक्रिय भूमिका रही है। हम कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक आयोजित की जा रही सभी बैठकों में शामिल हो रहे हैं। हमने भारत की प्राथमिकताओं जैसे कि प्रधानमंत्री मोदी द्वारा दैनिक जीवन को सुगम बनाने से जुड़ी पहल और आपदा से निपटने के लिए उचित अवसंरचना बनाने की संकल्पना का पुरजोर समर्थन किया है।

चूंकि जी-20 अध्यक्षता का दौर अपने आधे से अधिक पड़ाव को पार कर चुका है, जिसमें 100 से अधिक बैठकें हो चुकी हैं तो यह पड़ताल आवश्यक है कि हमने कितनी प्रगति की? इसमें कोई संदेह नहीं कि भारत अपनी अध्यक्षता में डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्टर से लेकर वित्तीय सुधार, ऊर्जा संक्रमण और जलवायु परिवर्तन के उपायों पर चर्चा में हुई प्रगति पर गर्व कर सकता है। फिर भी, दो देशों के रवैये ने इस प्रगति पर ग्रहण लगा दिया है। इस कारण एक के बाद एक बैठक

में वही स्थिति उत्पन्न होती जा रही है, जहां जी-20 के 18 सदस्य भारत द्वारा प्रस्तावित निष्कर्षों से पूर्ण सहमति जताते हैं, वहीं रूस और चीन इस सहमति में अड़ंगा लगा देते हैं। ऐसा क्यों है? गत वर्ष बाली में हुए जी-20 सम्मेलन में यही सहमति बनी थी कि यूक्रेन में युद्ध ने वैश्विक अर्थव्यवस्था को बुरी तरह प्रभावित किया है। इसके बावजूद रूस का अब भी यही रवैया है कि यूक्रेन में उसके आक्रमण से शेष विश्व को कोई सरोकार नहीं होना चाहिए, लेकिन यह सोच एकदम गलत है। पहली बात तो यही कि सीमाओं का अतिक्रमण और नागरिकों पर बमबारी एक सार्वभौमिक चिंता का विषय है। दूसरा यह कि इस युद्ध की गरीब देशों को बड़ी भारी आर्थिक कीमत चुकानी पड़ रही है। इसके चलते गैस, खाद्य उत्पाद और उर्वरक जैसी वस्तुओं के दाम आसमान पर पहुंच गए हैं। इसलिए रूस को ऐसे किसी मुगालते में नहीं रहना चाहिए कि जी-20 को उसके नाकाम साम्राज्यवादी मंसूबों के विध्वंसक आर्थिक परिणामों पर प्रतिक्रिया नहीं करनी चाहिए। ऐसी स्थिति में जी-20 को चाहिए कि वह रूस के पथभ्रष्ट युद्ध से उपजी खाद्य एवं ऊर्जा असुरक्षा का कोई समाधान तलाशे। रूस चाहे तो इस युद्ध को कभी भी समाप्त कर सकता है। आखिर रूस के सैन्य दुस्साहस की कीमत भारत की जी-20 अध्यक्षता भला क्यों चुकाए? रूस और चीन जी-20 के 18 देशों की इच्छा के विरुद्ध भारत की अध्यक्षता में क्यों ऐसे अड़ंगे लगाने पर तुले हैं?

इस साल सितंबर में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में जी-20 के नेता जब दिल्ली में सम्मेलन के लिए जुटेंगे तो यह मुद्दा चर्चा के केंद्र में होगा। इस शिखर सम्मेलन में विश्व में दो अवधारणाएं दांव पर होंगी। एक युद्ध में विश्वास करने वाले, जो जब चाहें पड़ोसी पर हमला बोलकर उसकी जमीन हड़प लें और अंतरराष्ट्रीय कानूनों को कुचलते रहें। दूसरी ओर होंगे वसुधैव कुटुंबकम् के समर्थक और ऐसा मानने वाले कि जिसके पास शक्ति हो आवश्यक नहीं कि वही सदैव सही हो। फ्रांस भारत के साथ मजबूती से खड़ा है और उसके विचारों के साथ है। हम भारत की आवाज के साथ अपनी आवाज मिलाएंगे, जैसा कि प्रधानमंत्री मोदी ने राष्ट्रपति मैक्रों के साथ एक हालिया बातचीत में कहा भी था कि वैश्विक बेहतरी के लिए हमें एक साझा ताकत के रूप में काम करना होगा।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:11-05-23

सेंसरशिप और उसकी कीमत

देवांशु दत्ता

बर्लिन की दीवार गिरने के कुछ वर्ष पहले मेरी मित्रता पूर्वी जर्मनी के एक इंजीनियर के साथ हो गई थी। वह बहुत अच्छी अंग्रेजी बोलने वाला एक सुशिक्षित व्यक्ति था। मैं उस वक्त एरिक मारिया रेमार्क के उपन्यासों में से एक द ब्लैक ओबेलिस्क पढ़ रहा था। मेरे मित्र ने कहा कि उसने इस लेखक के बारे में कभी नहीं सुना।

यह वैसा ही था जैसे कि आईआईटी से स्नातक की पढ़ाई किए हुए किसी व्यक्ति ने कभी शरत चंद्र के बारे में न सुना हो। रेमार्क की प्रसिद्ध रचनाओं में ऑल क्वाइट ऑन द वेस्टर्न फ्रंट को अक्सर दुनिया के महानतम युद्ध विरोधी

उपन्यासों में गिना जाता है। सन 1920 के दशक पर केंद्रित इस उपन्यास की विभिन्न भाषाओं में करीब 10 करोड़ प्रतियां बिकीं और यह उपन्यास कई बड़ी और पुरस्कृत फिल्मों की प्रेरणा बना।

यह जानने के बाद कि रेमार्क जर्मन थे, मेरे मित्र ने बहुत साहस के साथ अपने स्थानीय पुस्तकालय में उनके बारे में जानकारी जुटाने की कोशिश की। उन्हें पता चला कि सन 1930 के दशक में नाजियों ने रेमार्क को 'देशप्रेम न रखने वाला' मानकर प्रतिबंधित कर दिया था। युद्ध के बाद के वामपंथी शासनों ने इस प्रतिबंध को जारी रखा क्योंकि वे रेमार्क को 'प्रतिक्रियावादी' मानते थे। बहरहाल पुस्तकालयाध्यक्ष ने बताया कि रेमार्क की किताबों का अंग्रेजी तर्जुमा मौजूद है और मेरे मित्र ने ऑल क्वाइट ऑन द वेस्टर्न फ्रंट का अनुवाद पढ़ा।

मेरे लिए यह इस बात में झांकने का एक अवसर था कि ढकी हुई लेकिन सक्षम शिक्षा व्यवस्था किस प्रकार काम करती है। पूर्वी जर्मनी में तथा उसके बड़े भाई की भूमिका में रहने वाले तत्कालीन सोवियत संघ में भी हर कोई स्कूल और कॉलेज जाता था। वहां से अच्छे वैज्ञानिक और इंजीनियर भी निकले। इतना ही नहीं वहां अच्छे संगीतकार, नर्तक और फिल्मकार भी हुए। यानी ऐसा भी नहीं था कि जर्मनी की संस्कृति की अनदेखी की गई।

परंतु शिक्षा व्यवस्था ने देशप्रेम से विरक्त और प्रतिक्रियावादी माने जाने वाले तमाम लोगों के नामों का अस्तित्व ही मिटा दिया। उसने यह सुनिश्चित करने का काम किया कि केवल साहित्य, इतिहास, अर्थशास्त्र, दर्शन और राजनीति विज्ञान जैसे विषयों की स्वीकृत विषयवस्तु ही पढ़ाई जाए। सोवियत संघ में मजाक में कहा जाता था कि एक इतिहासकार का काम है यह सुनिश्चित करना कि अतीत विश्वसनीय लगे। ऐतिहासिक घटनाएं अगर शासन के लिए मुफीद नहीं होती थीं तो उन्हें गायब कर दिया जाता था। इतना ही नहीं अगर सरकार जिन चीजों को विश्वसनीय मानती थी उनमें परिवर्तन आता था तो किताबों को भी नए सिरे से लिखना पड़ता था।

इस प्रकार की सेंसरशिप तथा पुनर्लेखन को भी आंशिक तौर पर पूर्वी जर्मनी के पश्चिमी जर्मनी से कई क्षेत्रों में पिछड़ जाने की वजह माना जा सकता है। रूस तथा सोवियत संघ से निकले अन्य राज्यों को लोकतांत्रिक व्यवस्था अपनाने में जो मुश्किलें हुईं उनके पीछे भी यह वजह हो सकती है।

शिक्षा व्यवस्था में चुनिंदा कमियों ने स्टेम शोध को भी प्रभावित किया। सोवियत वैज्ञानिकों को दूसरे देशों के वैज्ञानिकों से आसानी से संवाद कायम करने की सुविधा नहीं थी। विद्वानों को भी पश्चिमी विश्वविद्यालयों के साथ किसी प्रकार के आदान-प्रदान कार्यक्रमों में हिस्सा लेने की मंजूरी नहीं थी। उन्हें इसके लिए उच्चस्तरीय स्वीकृति हासिल करनी पड़ती थी।

ट्रॉफिम लीसेंको तथा कुछ अन्य वैज्ञानिक भी थे ही जिनकी पहुंच पोलित ब्यूरो में ऊपर तक थी। लीसेंको एक कृषि वैज्ञानिक थे जो जीन तथा विरासत के बारे में अजीबोगरीब विचार रखते थे। परंतु स्टालिन उन्हें पसंद करते थे। अन्य सोवियत वैज्ञानिकों को पता था कि उनके विचार गलत हैं। उन्होंने अपने प्रयोगों के माध्यम से इसे साबित भी किया लेकिन ऐसा करने के परिणाम बहुत बुरे थे। लीसेंको पर सवाल खड़ा करने के लिए वैज्ञानिकों को जेल तक जाना पड़ा।

ऐसे में बेहतरीन वैज्ञानिकों ने बायोसाइंस से दूरी बना ली। सोवियत संघ इन विषयों में पश्चिम के देशों से दशकों पीछे छूट गया। उसे अकाल और खाद्यान्न की भारी कमी का भी सामना करना पड़ा। ऐसा इसलिए हुआ कि लीसेंको की समझ के कारण ऐसी फसलों का विकास नहीं हो सका जो जलवायु की दिक्कतों से निपट सकती थीं।

आज भी वैसे ही दृश्य देखने को मिल रहे हैं। यहां तक कि अमेरिका में भी जहां तथाकथित बाइबल बेल्ट वाले कई राज्यों में विकासवाद का सिद्धांत नहीं पढ़ाया जा रहा है क्योंकि वह धार्मिक बातों के साथ विरोधाभासी है। उन राज्यों से बहुत सीमित संख्या में बायोसाइंस शोधकर्ता निकलते हैं।

सोवियत, बल्गारियन और रोमानियन आदि राज्यों में एक हद तक अंधविश्वास भी था। पुराने जार शासन में रासपुटिन थे जो हीमोफीलिया ठीक करने के लिए फेथ हीलिंग करते थे। उसके बाद सत्ता संभालने वाले कम्युनिस्टों ने हर प्रकार के ज्योतिषियों, माध्यमों और मनोविज्ञान में आस्था जतायी। लीसेंको की विचित्रता से मेल खाते एक कदम में उन्होंने पारंपरिक रूप से लोगों को ठीक करने की वैकल्पिक व्यवस्था पर भी विचार किया और उसे वास्तविक औषधियों के समान माना। शायद यही वजह है कि सोवियत संघ में जीवन संभाव्यता अन्य अनुषंगी देशों से कम रही। यहां तक कि अत्यंत गरीब क्यूबा से भी कम।

एक अधिनायकवादी शासन के लिए विश्वसनीय नजर आने वाली किताबें लिखवाना और असहज करने वाले तथ्य हटाना बहुत आकर्षक लग सकता है। दुर्भाग्यवश इतिहास हमें बताता है कि लोगों को उनके जीवनकाल की गलतियों के लिए याद किया जाता है जबकि उनकी अच्छाइयां अक्सर उनके साथ ही दफन हो जाती हैं।

जनसत्ता

Date:11-05-23

पाकिस्तान में अराजकता

संपादकीय

पाकिस्तान जिस गंभीर राजनीतिक उथल-पुथल के दौर में चला गया है, उसकी आशंका पहले से बन रही थी। लेकिन वहां पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान को हिरासत में लिए जाने के बाद जैसे हालात पैदा हो गए हैं, उसे संभालना सरकार के लिए एक बड़ी चुनौती बन गई है। दरअसल, अल-कादिर विश्वविद्यालय ट्रस्ट में कथित भ्रष्टाचार के मामले में मंगलवार को इमरान खान को गिरफ्तार करने के लिए वहां जो तरीका अपनाया गया, उसे अप्रत्याशित माना जा रहा है। इमरान खुद पर दर्ज कई मामलों में से दो में जमानत हासिल करने इस्लामाबाद हाई कोर्ट गए थे, जहां अर्धसैनिक बल रेंजर्स ने उन्हें एक अन्य मामले में गिरफ्तार कर लिया और 'नेशनल अकाउंटिबिलिटी ब्यूरो' यानी नैब को सौंप दिया। बुधवार को अदालत ने उन्हें

आठ दिनों के रिमांड पर भेज दिया। गौरतलब है कि नैब पाकिस्तान में भ्रष्टाचार के मामलों की जांच करती है। हालांकि पाकिस्तान में जब से इमरान खान की कुर्सी गई है, तभी से शहबाज सरकार और सेना उनके खिलाफ शिकंजा कस रही थी। पिछले साल प्रधानमंत्री पद से अपदस्थ होने के बाद से उनके खिलाफ देश भर में कुल एक सौ चालीस से ज्यादा मामले दर्ज कराए गए हैं।

अंदाजा लगाया जा सकता है कि इमरान खान को घेरने के लिए शहबाज सरकार की ओर से किस शिद्दत से कार्रवाई की गई है। उन मामलों का क्या आधार है और आखिर वे किस नतीजे पर पहुंचेंगी, यह तो वहां की अदालतों के फैसलों पर निर्भर करेगा, लेकिन कार्रवाई के स्तर पर सरकार जिस तरह की जल्दबाजी में दिख रही है, उससे उसका मकसद साफ लग रहा है। हालांकि पाकिस्तान में शीर्ष पदों पर रह चुकी शख्सियतों को कानून के कठघरे में खड़ा किया जाना और उन्हें हाशिये पर डालना कोई नई बात नहीं है। लेकिन इमरान खान की गिरफ्तारी के बाद ऐसा शायद पहली बार है कि पाकिस्तान के कई इलाकों में आम जनता व्यापक विरोध प्रदर्शन कर रही हैं। हालात यहां तक पहुंच चुके हैं कि लोग सेना के ठिकानों में भी घुस गए और उन्होंने हिंसक हमले किए। यह छिपा नहीं है कि पाकिस्तान में सरकार के कामकाज में सेना का किस स्तर पर दखल रहा है और उसका असर समूचे देश के शासन के ढांचे पर क्या पड़ा है।

दरअसल, सत्ता से बाहर होने के बावजूद इमरान खान ने कई मुद्दों पर जो सार्वजनिक रुख अपनाया, बड़े विरोध प्रदर्शन जारी रखे, सेना पर भी निशाना साधा, उससे एक तरह से वहां जनमत-निर्माण भी हो रहा था। इसलिए निश्चित रूप से यह वहां की मौजूदा सरकार के लिए एक गंभीर चुनौती की स्थिति है, जो पहले ही आर्थिक मोर्चों पर गहराते संकट से निपट पाने में खुद को नाकाम पा रही है। सच यह है कि पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था डूबने के कगार पर दिख रही है। वहां के लोग महंगाई, बेरोजगारी, बढ़ती गरीबी से लेकर अन्य मुद्दों पर लगातार परेशान हैं और इसका आक्रोश वहां अक्सर होने वाले विरोध प्रदर्शनों में फूटता रहा है। ऐसे में इमरान खान स्वाभाविक ही एक प्रतिनिधि प्रतिपक्ष के रूप में खड़े थे और आक्रामक स्वर में चुनौती पेश कर रहे थे। अब उनकी अचानक गिरफ्तारी और उससे जुड़े घटनाक्रम के बाद पाकिस्तान में सुरक्षा और राजनीतिक मोर्चे पर अराजकता फैलने के साथ-साथ आर्थिक हालात और ज्यादा बिगड़ने की आशंका खड़ी हो गई है। पहले ही चौतरफा चुनौतियों से घिरी सरकार के लिए एक नई मुश्किल यह है कि पाकिस्तान में मौजूदा अराजक हालात और उथल-पुथल से निपटने में उसे अतिरिक्त ऊर्जा खर्च करनी होगी। खुद इमरान खान ने अपनी जान पर खतरे को लेकर जैसी आशंका जताई है, उसे गलत साबित करना सरकार के ही हाथ में होगा।

Date:11-05-23

मुफ्त सुविधाओं के सामाजिक-आर्थिक आयाम

सत्येंद्र किशोर मिश्र

जनतंत्र में सरकारें अपने संसाधनों का आबंटन लोकहित के मद्देनजर करती हैं। संविधान के नीति निर्देशक तत्त्वों में सरकारों से लोककल्याणकारी व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। अनुच्छेद 282 में अनुदान की व्यवस्था भी है। पर जनकल्याणकारी उपायों तथा मुफ्त उपहार के बीच अंतर की एक बारीक रेखा है। समय के साथ सियासी नफे-नुकसान की कसौटी पर मुफ्त की घोषणाएं समष्टि आर्थिक प्रबंधन को बिगाड़ कर सामाजिक-आर्थिक विकास में बाधक बन रही हैं।

सर्वोच्च अदालत ने सुब्रमण्यम बालाजी बनाम तमिलनाडु सरकार मामले में 2013 के फैसले के संदर्भ में दाखिल जनहित याचिका पर सुनवाई के दौरान मुद्दे की जटिलता को देखते हुए, इसे तीन जजों की पीठ को भेज कर पुनर्विचार और व्यापक सार्वजनिक बहस की जरूरत बताई। ऐसे में कल्याणकारी योजनाओं और सियासी दलों के मुफ्त की रेवड़ी के वादों के बीच अंतर समझने की जरूरत है। साथ ही देखना होगा कि ऐसे मामलों में न्यायिक हस्तक्षेप का दायरा क्या होना चाहिए? क्या अदालत द्वारा नियुक्ति विशेषज्ञ निकाय कुछ हासिल कर सकता है?

सर्वोच्च अदालत में 2011 में सरकारी खजाने से मुफ्त चीजें बांटने के राज्य सरकारों के अधिकार के खिलाफ दाखिल याचिका से इस बहस की शुरुआत हुई। हालांकि सर्वोच्च अदालत ने इसे भ्रष्ट आचरण नहीं माना, पर सियासी दलों द्वारा मुफ्त रेवड़ी बांटने की बढ़ती प्रतिस्पर्द्धा पर कटाक्ष किया कि भारत का चुनाव आयोग अगर ऐसी मुफ्तखोरी नहीं रोक सकता, तो देश को भगवान ही बचा सकता है। भारतीय रिजर्व बैंक की एक रिपोर्ट का दावा है कि सरकारों द्वारा मुफ्त सुविधाओं पर फिजूलखर्ची के कारण राज्यों की वित्तीय हालत खस्ताहाल होती जा रही है।

राजनीतिक विश्लेषकों, अर्थशास्त्रियों और समाज वैज्ञानिकों के 'मुफ्त सुविधाएं' बनाम 'जनकल्याण' के पक्ष और विपक्ष में अपने-अपने तर्क हैं। विपक्ष में तर्क है कि मुफ्तखोरी, मतदाताओं को घूस देने जैसा और लोकतांत्रिक मूल्यों पर खतरा है। नैतिक पहलू यह है कि जब सियासी दलों को चुनने की बात आती है, तो यह इस बात पर टिक जाती है कि कौन कितना मुफ्त उपहार की घोषणा कर रहा है। आर्थिक पहलू यह है कि सरकारी खजाने से मुफ्त उपहार राज्य की आर्थिक बेहतरी के लिए कितना बेहतर और टिकाऊ है। खाद्य सबसिडी और किसानों की कर्ज माफी जैसी योजनाएं मुफ्त उपहार ही तो हैं। सियासी दलों के तर्कहीन वादे चुनावी नफे-नुकसान की होड़ में, दीर्घकालीन सामाजिक-आर्थिक विकास की संभावनाओं को धूमिल कर रहे हैं।

इसके पक्षकार इसे लोककल्याणकारी उपाय मानते हैं, जिसमें मुफ्त वस्तु या सेवाएं सरकारी खजाने से दी जाती हैं। समझना महत्त्वपूर्ण है कि क्या मुफ्त को कल्याणकारी व्यय माना जा सकता है? सरकारी खजाने से व्यय के रूप में नीतिगत हस्तक्षेप, जो सीधे उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि सुनिश्चित नहीं करता, 'मुफ्त' माना जा सकता है। ऐसे व्यय जो सामाजिक-आर्थिक लाभ की संभावना उत्पन्न करते हैं, लोककल्याणकारी व्यय माना जाता है। इसी अस्पष्ट आधार पर सार्वजनिक वितरण प्रणाली, रोजगार गारंटी योजनाएं तथा शिक्षा और स्वास्थ्य पर राज्यों के समर्थन को कल्याणकारी व्यय माना जाता है। दूसरी ओर, मुफ्त बिजली-पानी, मुफ्त सार्वजनिक परिवहन, कर्ज माफी आदि को अक्सर 'फ्रीबीज' माना जाता है। समय और संदर्भ के साथ इसका अर्थ बदल सकता है। भारतीय अर्थव्यवस्था में गरीबी तथा आय असमानता को देखते हुए कुछ मुफ्त उपहार उचित भी हो सकते हैं। कभी-कभी, मुफ्त उपहार एक सक्षम मानव संसाधन तैयार करते हैं, जो कि किसी भी विकास रणनीति का एक आवश्यक हिस्सा है।

दरअसल, मुफ्तखोरी के राजनीतिक विमर्श में आर्थिक सिद्धांतों की कमी है। अर्थशास्त्री भेद करने के लिए सार्वजनिक वस्तुओं बनाम निजी वस्तुओं, 'मेरिट' तथा गैर-मेरिट वस्तुओं जैसे शब्दों का उपयोग करते हैं। 'मेरिट' वस्तुओं में सकारात्मक बाह्यताएं होती हैं, यानी प्रभावित व्यक्ति के कल्याण के साथ ही सामाजिक हित में बेहतरी आती है। जबकि गैर-मेरिट वस्तुओं में नकारात्मक बाह्यताएं हो सकती हैं, इस पर व्यय दूसरों से वसूला जाता है। फिर भी लाभार्थी परिवार के आय सृजन में भाग ले सकते हैं। ऐसे में यह तय करना कठिन है कि कौन-सी मुफ्तखोरी अच्छी और जरूरी है तथा कौन-सी गैर-जरूरी तथा खराब है? इसे कौन तय करेगा? बेशक, एक कल्याणकारी राज्य में समाज के हाशिये पर पड़े नागरिकों के हितों की रक्षा जरूरी है। पर मुफ्त उपहार हर किसी के लिए मुफ्त नहीं हो सकता, क्योंकि सरकार इसे

दृश्य-अदृश्य रूप में अन्य करदाताओं से वसूलती है। साथ ही, सरकारें नुकसान की भरपाई के लिए समाज के अन्य वर्गों पर अंतहीन बोझ नहीं लाद सकती हैं।

'मुफ्त उपहार' संबंधी बहस लोकतांत्रिक पूंजीवाद तथा नवउदारवाद के दायरे में बाजार की भूमिका को स्वीकार करती है। उपयोगितावाद तथा समतावादी दृष्टिकोण अधिकतम लोगों के कल्याण के साथ सामाजिक न्याय के तर्क को आधार बनाता है। वहीं क्षमता दृष्टिकोण में विकास को लोगों की स्वतंत्रता का विस्तार कर उनकी क्षमताओं को बढ़ाने की प्रक्रिया के तौर पर देखा जाता है। इन सभी सामाजिक-आर्थिक विचारों में समाज कल्याण में राज्य की भूमिका को लेकर संशय नहीं है। पर किसे मुफ्तखोरी माना जाए तथा किसे विकास व्यय अनिर्णय की स्थिति? राज्य सरकारों द्वारा दिए गए मुफ्त उपहार कर्ज का बोझ बढ़ाकर आर्थिक बदहाली ला सकते हैं। प्रश्न है कि मुफ्तखोरी क्या इतनी बुरी हो सकती है कि आर्थिक विनाश का कारण बन जाए?

वर्ष 2020-21 में आरबीआइ की राजकोषीय जोखिम रिपोर्ट में भारी कर्जदार राज्यों में कर्ज सकल घरेलू उत्पाद (जीडीएसपी) के आधार पर ज्यादातर राज्यों की वित्तीय हालात बहुत बुरी है। पंजाब में यह सबसे अधिक 53.6 फीसद है, जो चिंता का सबब है। अन्य राज्यों, राजस्थान में 39.5 फीसद, बिहार में 38.6, केरल में 37, उत्तर प्रदेश में 34.9, पश्चिम बंगाल में 34.2, झारखंड में 33.0, आंध्र प्रदेश में 32.5, मध्यप्रदेश में 31.3 तथा हरियाणा में 29.4 फीसद के साथ बड़े कर्जदार राज्य हैं। इन राज्यों का भारत के सभी राज्य सरकारों द्वारा कुल व्यय का लगभग आधा हिस्सा है और राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन कानून 2003 का उल्लंघन भी कर रहे हैं।

एक अनुमान है कि विभिन्न राज्यों में मुफ्त उपहारों पर खर्च जीएसडीपी के 0.1 से 2.7 फीसद के बीच है। पंजाब और आंध्र प्रदेश जैसे अत्यधिक ऋणग्रस्त राज्यों में मुफ्त उपहार जीएसडीपी के दो फीसद से अधिक है। भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के नवीनतम आंकड़ों के अनुसार, सबसिडी पर राज्य सरकारों का खर्च भी वर्ष 2020-21 और वर्ष 2021-22 के दौरान 12.9 फीसद तथा 11.2 फीसद बढ़ा है। राज्यों द्वारा कुल राजस्व व्यय में सबसिडी का हिस्सा वर्ष 2019-20 के 7.8 फीसद से बढ़ कर वर्ष 2021-22 में 8.2 फीसद हो गया है। मुफ्त उपहार समग्र आर्थिक प्रबंधन की बुनियाद को कमजोर करते हैं। पंजाब के मामले में, अनुमान है कि मुफ्त उपहारों का वादा जीएसडीपी के तीन फीसद का अतिरिक्त भार डालने वाला है। मुफ्तखोरी की सियासत व्यय प्राथमिकताओं को विकृत कर सामाजिक-आर्थिक असमानताओं को बढ़ा सकती है।

गरीबों के कल्याण के लिए मुफ्त उपहार या अनुदान आवश्यक होते हैं, जो बुनियादी जरूरतों को पूरा कर सकते हैं, पर अनियंत्रित और अतार्किक 'दान' या अनुदान, अर्थव्यवस्था पर बोझ बन सकते हैं। इसके बजाय, विकास परियोजनाओं सहित सामाजिक-आर्थिक बुनियादी ढांचे के निवेश पर जोर, अर्थव्यवस्था के दीर्घकालीन सतत विकास में मदद करता है। मुफ्त उपहार जनता को अस्थायी राहत दे सकते हैं, लेकिन वे देश की अर्थव्यवस्था में भी सेंध लगाते हैं। महत्त्वपूर्ण है कि समय आ गया है कि सियासत के दायरे से बाहर, इस व्यवस्था पर तार्किक नजरिए से समग्रता में विचार हो।

राष्ट्रीय सहारा

Date:11-05-23

सरोगेसी पर सख्तियां

संपादकीय

केंद्र सरकार ने लिव इन में रहने वालों के साथ समलैंगिक जोड़ों को भी सरोगेसी एक्ट के दायरे में लाने का विरोध किया है। उच्चतम न्यायालय में केंद्र सरकार की तरफ से लगाये गये हलफनामें में लिखा गया है। कि ऐसे मामलों में किराए की कोख से जन्मे बच्चे के उज्जवल भविष्य को लेकर भी आशंका बनी रहेगी। अकेली औरतों यानी अविवाहित व सिंगल मदर को सरोगेसी एक्ट के लाभ से वंचित रखने के फैसले को उचित ठहराया। अकेली स्त्री में अभी यह सुविधा उनके लिये है, जो बेवा हो और सामाजिक भय से खुद बच्चा ना जनना चाहती हो। तलाकयाफ्ता स्त्री भी इस सुविधा का लाभ ले सकती है, जो पुनर्विवाह की इच्छुक ना हो । यह हलफनामा सरोगेसी एक्ट के विभिन्न प्रावधानों को चुनौती देने वाली याचिकाओं के जवाब में दाखिल किया गया। अभी यह एक्ट सिर्फ कानूनी मान्यता प्राप्त विवाहित पुरुष को ही अभिभावक के तौर पर ही मान्यता देता है । विवाह के लिए अनिच्छुक युवा, समलैंगिक, लिव इन कपल आदि में किराये की कोख के प्रति जबरदस्त आकर्षण है। इसके प्रति लोगों का रुझान देखते हुए सरकार को कड़े कानून बनाने की जरूरत महसूस हुई। खासकर समृद्ध युवाओं में यह क्रेज तेजी से फैला । किराये की कोख से जन्मे बच्चों की सुरक्षा के लिए दायरे खींचना जरूरी है। क्योंकि कई मामलों में किराये की कोख लेने व देने वालों के बीच हुए विवाद भी अदालत तक जा पहुंचे। हालांकि जिनके पास पैसों की कमी नहीं है, उन्हें आने वाले बच्चे के सुरक्षित भविष्य के लिए मौजूदा योजनाओं के लिए पाबन्द किया जा सकता है। व्यावहारिक तौर पर देखें तो ढेरों दंपति अपने ही बच्चों के साथ गैर-जिम्मेदाराना रवैया दर्शाते नजर आते हैं। जो अपने जने बच्चों के उज्जवल भविष्य के प्रति घोर लापरवाही करते फिरते हैं । जिन्हें कोई दोषी नहीं ठहरा सकता । न समाज, न सरकार, न ही कानून के दायरे में उन पर दोष मढ़ा जा सकता है। विज्ञान मान रहा है, बायलॉजिकली कुछ लोगों में विवाह के प्रति कोई आकर्षण नहीं होता। दूसरे जो समलैंगिक हैं, किसी अन्य कारण से अकेले हो चुके हैं, उनमें भी बच्चों के प्रति ममता और वात्सल्य होता है । उन सबकी भावनाओं की कद्र करने की भी व्यवस्था होनी चाहिए। सख्तियां या कड़े कानून अच्छे हैं, मगर उनकी आड़ में आने वाली नस्लों के रास्ते में रोड़े ना डाले जाएं।

Date:11-05-23

पर्यटन सेक्टर में है पावर

डॉ. जयंतीलाल भंडारी

इन दिनों देश-और दुनिया में पर्यटन से संबंधित प्रकाशित हो रही रिपोर्टों में कहा जा रहा है कि भारत का घरेलू और वैश्विक पर्यटन उद्योग कोविड-19 के निराशाजनक पर्यटन परिदृश्य से पार होते हुए अब तेजी से छलांगें लगाकर आगे बढ़ रहा है। इंडिया टूरिज्म स्टैटिस्टिक्स, 2022 रिपोर्ट में कहा गया है कि वैश्विक यात्रा और वैश्विक पर्यटन सूचकांक में भारत की रैंकिंग 2021 में 54वीं रही। कोविड-19 महमारी और प्रतिबंधों की वजह से भारत में विदेशी पर्यटकों के आगमन में 2021 में 44.5 फीसदी की गिरावट आई। 2020 में 2.74 मिलियन विदेशी पर्यटकों ने भारत की यात्रा की। वहीं 2021 में यह संख्या घटकर 1.52 मिलियन रही। 2022 से विदेशी पर्यटकों की संख्या तेजी से बढ़ने लगी है। 2022 में करीब 6.9 मिलियन विदेशी पर्यटक भारत आए। भारत में 2021 में 677.63 मिलियन लोगों ने घरेलू पर्यटन यात्राएं कीं जो 2020 में 610.22 मिलियन से 11.05 फीसदी अधिक है। खास बात यह भी है कि दुनिया भर के पर्यटकों में करीब 1.64 फीसदी विदेशी पर्यटक भारत आते हैं।

उल्लेखनीय है कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने विगत 2 मार्च को 'मिशन मोड में पर्यटन का विकास' विषय पर बजट के बाद आयोजित वेबिनार को संबोधित करते हुए कहा कि 2023-24 के केंद्रीय बजट में घरेलू और अंतरराष्ट्रीय पर्यटन के लिए समग्र पैकेज के रूप में विकसित करने के लिए 50 नये पर्यटन स्थलों संबंधी घोषणा से पर्यटन सेक्टर के बढ़ने की गति और तेज होने की संभावना है। पर्यटन क्षेत्र के बुनियादी ढांचे के विकास के लिए 2023-24 के केंद्रीय बजट में 1742 करोड़ रु पये का आवंटन किया गया है। प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि अब यह मिथक टूट गया है कि पर्यटन एक आकर्षक (फैंसी) शब्द है, जो केवल देश के उच्च आय वाले समूहों से ही जुड़ा हुआ है। हमारे गांव पर्यटन के केंद्र बन रहे हैं, और बुनियादी ढांचे में सुधार के कारण दूर-सुदूर के गांव अब पर्यटन मानचित्र पर आ रहे हैं। केंद्र सरकार ने सीमा के पास स्थित गांवों के लिए 'वाइब्रेंट विलेज योजना' शुरू की है, और गांवों के अनुकूल होम स्टे, छोटे होटल और रेस्तरां जैसे व्यवसायों को सहायता देने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। वस्तुतः सुविधाओं में बढ़ोतरी होने से पर्यटकों के बीच पर्यटन के लिए आकर्षण में वृद्धि हुई है। बढ़ते देशी-विदेशी पर्यटक राजस्व तथा रोजगार बढ़ाकर आर्थिक-सामाजिक तस्वीर संवार रहे हैं।

वाराणसी में काशी विश्वनाथ धाम मंदिर के पुनर्निर्माण से पहले यहां साल में लगभग 80 लाख लोग आते थे, लेकिन नवीनीकरण के बाद 2022 में पर्यटकों की संख्या 7 करोड़ से अधिक हुई है। केदार घाटी में पुनर्निर्माण का कार्य पूरा होने से पहले 4-5 लाख तीर्थयात्रियों की तुलना में पिछले साल 15 लाख श्रद्धालु बाबा केदार के दर्शन करने आए। इसी तरह का आगमन गुजरात के पावागढ़ में हुआ है। जीर्णोद्धार से पहले केवल 4 से 5 हजार लोगों के आगमन की तुलना में पिछले साल 80 हजार तीर्थयात्री मां कालिका के दर्शन के लिए आए। दुनिया की सबसे ऊंची प्रतिमा 'स्टैच्यू ऑफ यूनिटी' का निर्माण पूरा होने के एक साल के भीतर 27 लाख पर्यटकों ने यहां की यात्रा की है।

भारत आने वाले विदेशी पर्यटक औसतन रूप से 1700 डॉलर खर्च करते हैं, जबकि अंतरराष्ट्रीय यात्री अमेरिका में औसतन 2500 डॉलर और ऑस्ट्रेलिया में लगभग 5000 डॉलर खर्च करते हैं। भारत के पास अधिक खर्च करने वाले

पर्यटकों को देने के लिए बहुत कुछ है। भारत के कई ऐसे चमकीले बिंदु हैं, जो देश में टूरिज्म के विभिन्न आयामों को आगे बढ़ाते हुए दिखाई दे रहे हैं। यहां की संस्कृति, संगीत, हस्तकला, खानपान से लेकर नैसर्गिक सुंदरता हमेशा से देसी-विदेशी पर्यटकों को आकर्षित त करते रहे हैं। देश में तरह-तरह के विभिन्न पर्यटन तेजी से बढ़ रहे हैं। इनमें तटीय पर्यटन, समुद्रतट पर्यटन, हिमालय पर्यटन, साहसिक पर्यटन, वन्यजीव पर्यटन, पर्यावरण पर्यटन, विरासत पर्यटन, आध्यात्मिक पर्यटन, विवाहस्थल, पर्यटन, खेल पर्यटन, रामायण सर्किट, बुद्ध सर्किट, कृष्णा सर्किट, गांधी सर्किट पर्यटन, सांस्कृतिक विरासत पर्यटन, जिओ-हेरिटेज पर्यटन, योग, आयुर्वेद एवं चिकित्सा पर्यटन आदि प्रमुख हैं।

यह बात महत्वपूर्ण है कि इस समय जब 2023 में भारत द्वारा जी-20 की अध्यक्षता की जा रही है तथा जनवरी, 2023 से जी-20 देशों के प्रतिनिधियों के साथ दुनिया के विभिन्न देशों के अतिथि भारत में जी-20 की कार्यसमूह की बैठकों में सहभागिता के साथ जिस तरह विभिन्न प्रदेशों में स्थित पर्यटन स्थलों में रु चि दिखा रहे हैं, उससे दुनिया में भारत के पर्यटन स्थलों का व्यापक प्रचार-प्रसार होगा। उम्मीद कर सकते हैं किभारत का टूरिज्म सेक्टर 2030 तक 250 अरब डॉलर तक की आमदनी प्राप्त करते हुए दिखाई देगा। उम्मीद करें कि भारत सरकार ने समावेशी विकास के माध्यम से 2030 तक पर्यटन उद्योग के जरिए 56 अरब डॉलर विदेशी मुद्रा अर्जित करने और लगभग 14 करोड़ नौकरियां सृजित करने का जो लक्ष्य निर्धारित किया है, वह साकार होते हुए दिखाई देगा।